सूर्यातप

(INSOLATION)

सामान्य परिचय

वायुमण्डल तथा पृथ्वी की ऊष्मा (heat) का प्रधान स्रोत सूर्य है । सौर्यिक ऊर्जा को ही 'सूर्यातप' कहते हैं । ट्रिवार्था के शब्दों में "लघु तरंगों के रूप में संचालित (ल० 1/250 से 1/6700 मिमीटर) और 1,86,000 मील प्रति सेकेण्ड की गति से भ्रमण करती हुई प्राप्त सौर्यिक ऊर्जा को 'सौर्य विकिरण' या 'सूर्यातप' कहते हैं "।[1] सूर्य धधकता हुआ गैस का वृहद् गोला है, जिसकी व्यास पृथ्वी से 100 गुना तथा उसके आयतन से 100,000 गुना अधिक है । सूर्य के धरातल का तापक्रम 11,000° F या 6000° C तथा केन्द्रीय भाग का 50,000,000° फा० बताया जाता है । पृथ्वी के वायुमण्डल का औसत तापक्रम 250°K (–23°C)[2] तथा पृथ्वी के धरातल का औसत तापक्रम 283°K (10° C या 50°F) होता है । सूर्य की ऊर्जा का प्रधान स्रोत उसका आन्तरिक भाग है जहाँ पर अत्यधिक दबाव तथा उच्च तापमान के कारण नाभिकीय फ्यूज़न के कारण हाइड्रोजन का हीलियम में रूपान्तर होने से ऊष्मा का जनन होता है । यह ऊष्मा परिचालन तथा संवहन द्वारा सूर्य की बाहरी सतह तक पहुँचती है । सूर्य की वाह्य सतह से निकलने वाली ऊर्जा को **फोटान** कहते हैं । इसी तरह सूर्य की वाह्य सतह को **फोटोस्फीयर** कहते हैं । इस सतह से ऊर्जा का विद्युतचुम्बकीय तरंग द्वारा विकिरण होता है ।

सूर्य के धरातल के प्रत्येक वर्ग इंच से विकीर्ण ऊर्जा 100,000 अश्वशक्ति के बराबर होती है । सूर्य की वाह्य सतह (फोटोस्फीयर) से निकलने वाली ऊर्जा प्रायः स्थिर रहती है । इस तरह पृथ्वी की सतह के प्रति इकाई क्षेत्र पर सूर्य से प्राप्त ऊर्जा प्रायः स्थिर रहती है । इसे **सौर्यिक स्थिरांक** (solar constant) कहते हैं । इस तरह **सौर्यिक स्थिरांक** सूर्य के विकिरण की दर को प्रदर्शित करता है जो प्रति वर्ग सेण्टीमीटर प्रति मिनट 2 ग्राम कैलरी (या 2 **लैंजली**) है। सूर्य से 93,000,000 मील (औसत) दूर स्थित पृथ्वी सौर्यिक ऊर्जा का केवल 1/2,000,000,000 भाग ही प्राप्त कर पाती है । परन्तु यह स्वल्प मात्रा भी 23,000,000,000,000 अश्वशक्ति के बराबर हो जाती है । सूर्य से प्राप्त इस न्यून ऊर्जा के कारण ही भूतल पर सभी प्रकार के जीवों का अस्तित्व सम्भव हो सका है । इसी कारण धरातल पर पवन संचार, सागरीय धाराओं का प्रवाह तथा मौसम एवं जलवायु का आविर्भाव होता है । प्रत्येक वस्तु, जिसमें ऊष्मा होती है, विकिरण करती है । नियमानुसार जो वस्तु जितनी अधिक गर्म होती है, उसकी तरंगें उतनी ही छोटी होती हैं । इसी कारण से सूर्य विकिरण द्वारा निकली ऊष्मा लघु तरंगों के रूप में होती है तथा प्रति सेकेण्ड 1,86,000 मील की गति से भ्रमण करती है । इसके विपरीत अपेक्षाकृत कम तापक्रमवाली वस्तु से विकिरण तो कम होता है, परन्तु दीर्घ तरंग के रूप में होता है । उदाहरण के लिए पृथ्वी से विकीर्ण ऊर्जा दीर्घ तरंगों के रूप में होती है ।

धरातल पर सूर्यातप का वितरण

सूर्यातप की सर्वाधिक मात्रा विषुवत रेखा के पास होती है क्योंकि यहाँ पर दिन-रात की लम्बाई बराबर होती है तथा सूर्य की किरणें लगभग लम्बवत् होती हैं । परन्तु सूर्य के दक्षिणायन तथा उत्तरायण की स्थितियों के कारण अत्यधिक सूर्यताप मण्डल विषुवत-रेखा के दोनों ओर सरकता रहता है । विषुवत रेखा से सूर्यातप ध्रुवों की ओर कम होता

जाता है। ध्रुवों पर यह ताप इतना कम हो जाता है कि विषुवत रेखा का केवल 40 प्रतिशत ही प्राप्त हो पाता है। इस तरह ध्रुवीय क्षेत्र न्यूनतम सूर्यातप प्राप्त करते हैं। **इक्वीनाक्स** (equinox-विषुव) के समय दोनों गोलार्द्धों में सूर्यातप का वितरण प्रायः समान रहता है। इसके विपरीत **कर्क तथा मकर संक्रांति** (solstices) के समय दोनों गोलार्द्धों में ध्रुवों के बीच सूर्यातप के वितरण में पर्याप्त असमानता होती है। यहाँ पर यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि सूर्यातप के वितरण पर वायुमण्डल के परावर्तन, शोषण तथा प्रकीर्णन आदि प्रभावों का पर्याप्त असर होता है। इसी कारण से कर्क संक्रान्ति के समय जबकि सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध में कर्क रेखा पर लम्बवत् होता है, ध्रुवों पर दिन की अवधि सर्वाधिक लम्बी होने पर भी सूर्यातप सर्वाधिक नहीं हो पाता है, अपितु अधिकतम सूर्यातप 40° अक्षांश के आस-पास प्राप्त होता है। धरातलीय तापक्रम निम्न मध्य अक्षांश वाले भागों में सर्वाधिक होता है, न कि भूमध्य-रेखा के पास। यदि ग्लोब पर वार्षिक सूर्यातप के अक्षांशीय वितरण पर दृष्टिपात किया जाय तो तीन स्पष्ट मण्डल दृष्टिगत होते हैं –(अ) **निम्न अक्षांशीय या अयनवर्तीय मण्डल** – जिसका विस्तार कर्क तथा मकर रेखाओं के बीच पाया जाता है। सूर्य के उत्तरायण तथा दक्षिणायन होने के कारण इस मण्डल में प्रत्येक स्थान पर सूर्य की किरणें वर्ष में दो बार लम्बवत् पड़ती हैं, जिस कारण प्रत्येक स्थान वर्ष में दो बार अधिकतम तथा दो बार न्यूनतम सूर्यातप प्राप्त करता है। इसको छोड़कर यह भाग साल भर ऊँचा सूर्यातप प्राप्त करता है तथा ऋतुवत् परिवर्तन नगण्य सा होता है। (ब) **मध्य अक्षांशीय मण्डल**– का विस्तार 23° से 66° अक्षांशों के बीच दोनों गोलार्द्धों में पाया जाता है। इस मण्डल के प्रत्येक स्थान पर साल में एक बार अधिकतम तथा एक बार न्यूनतम सूर्यातप (कर्क तथा मकर संक्रान्ति के अनुसार) प्राप्त होता है। वर्ष के किसी भी समय सूर्यातप अनुपस्थित नहीं हो पाता है, अतः यह कभी शून्य नहीं होता है परन्तु ऋतुवत् असमानताएं अधिक हो जाती हैं। (स) **ध्रुवीय मण्डल**– ध्रुवों के चतुर्दिक वर्ष में एक बार अधिकतम तथा एक बार न्यूनतम सूर्यातप प्राप्त होता है, परन्तु वर्ष के कुछ समय में सूर्य की प्रत्यक्ष किरणों के अभाव में सूर्यातप शून्य हो जाता है।

पृथ्वी की सतह पर प्राप्त सूर्यातप की मात्रा का वितरण (प्रतिशत में)

अक्षांश	0	10	20	30	40	50	60	70	80	90
सूर्यातप (प्रतिशत में)	100	99	95	88	79	68	57	47	43	42

सूर्यातप के वितरण को प्रभावित करने वाले कारक

सूर्यातप के उपर्युक्त वितरण से स्पष्ट हो गया है कि भूतल के विभिन्न भागों पर सूर्यातप की मात्रा समान नहीं हुआ करती है। सूर्य की किरणों को वायुमण्डल की एक मोटी परत से होकर गुजरना पड़ता है, अतः वायुमण्डल का प्रभाव सूर्यातप की मात्रा पर पड़ना स्वाभाविक ही है। इसके अलावा सूर्य की किरणों का सापेक्ष्य तिरछापन, दिन की अवधि, पृथ्वी से सूर्य की दूरी, सौर कलंक इत्यादि कारक किसी भी स्थान पर (वायुमण्डल की अनुपस्थिति में) सूर्यातप की मात्रा को प्रभावित करते हैं।

(i) सूर्य की किरणों का सापेक्ष्य तिरछापन

पृथ्वी के गोलाकार रूप के कारण सूर्य की किरणें सर्वत्र समान कोण पर नहीं पड़ती हैं। भूमध्य रेखा पर सूर्य की किरणें लम्बवत् होती हैं क्योंकि सूर्य सर्वाधिक ऊँचाई पर होता है, परन्तु ध्रुवों की ओर किरणों का कोण कम होता जाता है अर्थात् वे तिरछी होती जाती हैं। यद्यपि किरणों के सापेक्ष्य तिरछापन में कुछ परिवर्तन होता रहता है, उदाहरण के लिए 21 जून को सूर्य कर्क रेखा पर तथा 22 दिसम्बर को मकर रेखा पर लम्बवत् चमकता है, जिस कारण पहली स्थिति में दक्षिणी गोलार्द्ध में किरणें अधिक तिरछी होती हैं, तथापि साधारण रूप में भूमध्य-रेखा से ध्रुवों की ओर किरणों का तिरछापन बढ़ता जाता है। किरणों के इस तिरछेपन का प्रभाव दो रूप में होता है। (अ) लम्बवत् किरणें धरातल के कम क्षेत्र पर पड़ती हैं, जिस कारण उस स्थान का ताप अधिक हो जाता है, जबकि तिरछी किरणों की उतनी ही मात्रा अपेक्षाकृत धरातल के अधिक क्षेत्र पर पड़ती है। परिणामस्वरूप ताप कम हो जाता है। चित्र 30.1 में 'अ' तथा 'ब' किरणों की मोटाई समान है, परन्तु सीधी 'अ' किरणों द्वारा आवृत्त भाग 'स' तिरछी किरणों

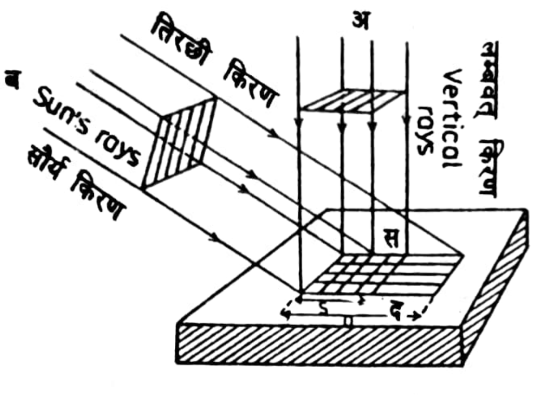

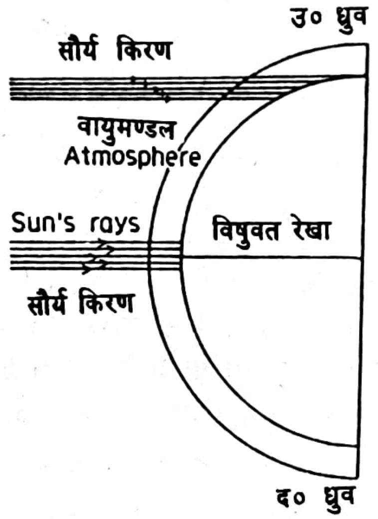

सूर्य की किरणों के तिरछेपन का सूर्यातप के वितरण पर प्रभाव ।

'ब' द्वारा आवृत्त भाग द से अधिक छोटा है । (ब) सीधी **किरणों को वायुमण्डल** की अपेक्षाकृत पतली परत को पार **करना होता है,** जिस कारण सूर्यातप की कम मात्रा ही **वायुमण्डल में** नष्ट हो पाती है, क्योंकि किरणों को वायुमण्डल **की** कम दूरी पार करनी पड़ती है । इसके विपरीत तिरछी **किरणों** को वायुमण्डल की मोटी परत को पार करते समय **अधिक** दूरी तय करनी पड़ती है, जिस कारण ताप की **अधिकांश** मात्रा वायुमण्डल में नष्ट हो जाती है । चित्र 30.1 **से यह** तथ्य स्पष्ट हो जाता है ।

(ii) दिन की अवधि

यदि अन्य दशाएं समान हों तो दिन की अवधि जितनी अधिक होगी, सूर्यातप की मात्रा उतनी ही अधिक होगी । पृथ्वी अपनी कक्षा पर 66.5° का कोण बनाती हुई लगभग 24 घण्टे में अपनी कीली पर एक परिक्रमा पूरा करती है तथा साथ ही सूर्य के चारों तरफ भी वर्ष में एक बार चक्कर लगाती है । यदि पृथ्वी भी अपनी जगह पर स्थिर होती तो वर्तमान स्थिति के विपरीत दशा होती, परन्तु पृथ्वी की दैनिक तथा वार्षिक गति के कारण भूमध्य-रेखा को छोड़कर शेष भागों पर दिन की अवधि में अन्तर आता रहता है । भूमध्य रेखा पर दिन सदैव 12 घण्टे का इसलिए होता है कि प्रकाश वृत्त भूमध्य-रेखा को दो बराबर भागों में काटता है । सूर्य की उत्तरायण स्थिति के समय (जब सूर्य कर्क रेखा पर होता है) भूमध्य-रेखा से उत्तर की ओर दिन की अवधि बढ़ती जाती है तथा उत्तरी ध्रुव पर 6 मास का दिन होता है । इसके विपरीत भूमध्य रेखा से दक्षिण जाने पर दिन की अवधि कम हो जाती है, जबकि द० ध्रुव पर केवल रात (6 मास) ही होती है । सूर्य की दक्षिणायन स्थिति में (जबकि सूर्य मकर रेखा पर होता है) भूमध्य-रेखा से दक्षिण की ओर दिन की अवधि बढ़ती जाती है और उत्तर की ओर घटती जाती है । केवल 21 मार्च तथा 23 सितम्बर को, जबकि सूर्य की स्थिति भूमध्य-रेखा पर होती है, सर्वत्र दिन-रात बराबर होते हैं । स्मरणीय है कि किरणों के तिरछेपन तथा दिन की अवधि के प्रभाव सापेक्ष्य हुआ करते हैं । उच्च अक्षांशों में (21 जून, उत्तरी गोलार्द्ध) दिन की अवधि 6 मास होने पर भी सूर्यातप न्यूनतम इसलिए होता है कि सूर्य की किरणें सर्वाधिक तिरछी होती हैं । जहाँ पर दिन की अवधि अधिक होती है तथा साथ ही साथ किरणें सीधी पड़ती हैं वहाँ पर निश्चित रूप से ताप अधिक प्राप्त होता है ।

अक्षांश	0°	17°	41°	49°	63°	66.5°	67° 21′	70° 11′	90°
दिन की अवधि (अधिकतम)	12 घं	13 घं	15 घं	16 घं	20 घं	24 घं	1 मास	4 मास	6 मास

(iii) पृथ्वी से सूर्य की दूरी

पृथ्वी अण्डाकार कक्ष के सहारे सूर्य की परिक्रमा करती है, जिस कारण उसकी सूर्य से दूरी में परिवर्तन होता रहता है । औसत रूप में पृथ्वी सूर्य से 93,000,000 मील (149 मिलियन किमी०) दूर है, परन्तु निकटतम दूरी 91,500,000 मील (147 मिलियन किमी०) है । इस स्थिति को **उपसौर** (perihelion) कहते हैं । यह स्थिति 3 जनवरी को होती है । इसके विपरीत 4 जुलाई को **अपसौर** (aphelion) की स्थिति होती है, जबकि पृथ्वी सूर्य से

तरंगों का अवशोषण न होकर केवल दीर्घ तरंगों का ही हो पाता है। प्रकीर्णन, परावर्तन तथा अवशोषण द्वारा सूर्यातप की नष्ट होने वाली मात्रा मुख्य मुख्य रूप से सूर्य की किरणों के कोण तथा वायुमण्डल के पारदर्शक तत्व पर आधारित होती है। सूर्य से विकीर्ण समस्त सूर्यातप का लगभग 35 प्रतिशत भाग परावर्तन तथा प्रकीर्णन द्वारा आकाश में वापस लौट जाता है तथा इसका उपयोग न ही वायुमण्डल को गर्म करने में हो पाता है और न ही पृथ्वी को। सूर्यातप के 14 प्रतिशत भाग का वायुमण्डल द्वारा अवशोषण हो जाता है। इस तरह सूर्यातप का केवल 51 प्रतिशत भाग पृथ्वी को प्राप्त हो पाता है, जिससे वायुमण्डल का निचला भाग गर्म होता है। किसी भी सतह से विकिरण ऊर्जा के परावर्तित भाग को **अलबिडो** (albedo) कहा जाता है। पृथ्वी की सतह का औसत अलबिडो 24 से 34 प्रतिशत के बीच बताया जाता है।

वायुमण्डल तथा पृथ्वी की ऊष्मा का संतुलन

(Heat Balance of the Atmosphere & the Earth)

सामान्य परिचय

पृथ्वी की ऊष्मा का सर्वाधिक भाग सूर्य से प्रत्यक्ष रूप में प्राप्त होता है। सूर्य से जो ऊर्जा विकीर्ण होती है, उसे **'लघु तरंग सौर्यिक विकिरण'** (shortwave solar radiation) की संज्ञा दी जाती है। वायुमण्डल प्रत्यक्ष रूप में सूर्य की विकीर्ण ऊर्जा का केवल 14 प्रतिशत अंश ही प्राप्त कर पाता है। वायुमण्डल की अधिकांश ऊष्मा पृथ्वी से विकीर्ण ऊर्जा द्वारा प्राप्त होती है। पृथ्वी द्वारा होने वाला विकिरण दीर्घ तरंगों के रूप में होता है, जिसे **'दीर्घ तरंग धरातलीय (पार्थिव) विकिरण'** (longwave terrestrial radiation) कहते हैं। स्पष्ट है कि पृथ्वी (प्रत्यक्ष रूप में) तथा वायुमण्डल (अप्रत्यक्ष रूप में) सूर्य से सतत ऊष्मा प्राप्त करते रहते हैं, तथापि उनका ऊष्मा भंडार न तो सामान्य से अधिक हो पाता है न तो कम ही। इससे आभास होता है कि पृथ्वी तथा वायुमण्डल के ऊष्मा-भण्डार में सदैव सन्तुलन की स्थिति रहती है, अर्थात् ये जितनी ऊष्मा सूर्य से प्राप्त करते हैं, उतनी ही मात्रा को बाद में शून्य में लौटा देते हैं।

पृथ्वी की ऊष्मा-बजट (Heat Budget of the Earth)

सूर्य से जितनी ऊर्जा विकीर्ण होती है, उसका कुछ भाग ही पृथ्वी को प्राप्त हो पाता है, क्योंकि वायुमण्डल द्वारा प्रकीर्णन, परावर्तन तथा अवशोषण के कारण कुछ भाग शून्य में लौटा दिया जाता है तथा कुछ भाग वायुमण्डल में बिखेर दिया जाता है। सूर्य से विकीर्ण ऊर्जा का 35 प्रतिशत भाग मौलिक रूप में शून्य से वापस लौटा दिया जाता है। इसमें से 6% वायुमण्डल से प्रकीर्णन द्वारा, 27% वायुमण्डल में स्थित बादलों से परावर्तन द्वारा तथा 2% पृथ्वी की सतह से परावर्तन द्वारा शून्य में वापस लौट जाता है। अत: सौर्यिक ऊर्जा के इस 35% भाग का वायुमण्डल तथा पृथ्वी को गर्म करने में कोई हाथ नहीं रहता है। शेष 65% भाग से वायुमण्डल द्वारा जलवाष्प, बादल, धूलिकणों तथा स्थायी (कुछ) गैसों द्वारा 14% भाग का अवशोषण कर लिया जाता है। इस तरह केवल 51% ऊर्जा ही पृथ्वी को प्राप्त हो पाती है। इसमें से 24% भाग प्रत्यक्ष सूर्य प्रकाश से प्राप्त होता है तथा शेष 17% **'विसरित दिवा प्रकाश'** (diffuse day light) द्वारा प्राप्त होता है। सूर्य से प्राप्त यही 51% ऊष्मा ही पृथ्वी की वास्तविक बजट है। धरातल पर ऊष्मा-संतुलन के लिए इस मात्रा की भी वापसी होना आवश्यक है, क्योंकि यदि प्राप्त मात्रा से अधिक ह्रास होता है तो धरातल पर शीतलता आने लगेगी और कम मात्रा खर्च होती है तो धरातल अत्यधिक गर्म होने लगेगा। वायुमण्डल की ऊष्मा-बजट सौर्यिक ऊर्जा का 48% होती है। इसमें से वायुमण्डल सौर्य विकिरण से 14 प्रतिशत ऊर्जा का प्रत्यक्ष अवशोषण कर लेता है तथा शेष 34 पृथ्वी से होने वाले **'दीर्घ तरंग विकिरण** से प्राप्त करता है।

पृथ्वी तथा वायुमण्डल के ऊष्मा बजट को निम्न सारणी के रूप में व्यक्त किया जा सकता है–

प्रवेशी सौर्यिक विकिरण की मात्रा (Incoming Solar Radiation)		100%
प्रकीर्णन तथा परावर्तन द्वारा क्षय सौर्यिक विकिरण		
अ–बादलों से परावर्तित	27%	
ब–धरातल से परावर्तित	2%	35%
स–शून्य में वायुमण्डल द्वारा प्रकीर्ण (scattered)	6%	
शेष सौर्यिक विकिरण की मात्रा		

अ—पृथ्वी की ऊष्मा-बजट

1. प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त	34%		
2. विसरित दिवा प्रकाश से प्राप्त	17%	51%	
योग	51%		65%

ब—वायुमण्डल की ऊष्मा-बजट

1. प्रवेशी सौर्यिक विकिरण का प्रत्यक्ष अवशोषण	14%	14%	
2. बहिर्गामी पार्थिक विकिरण द्वारा प्राप्त	34%		
योग	48%		

उपर्युक्त विवरण के आधार पर पृथ्वी प्रवेशी सौर्यिक विकिरण का 51% भाग प्राप्त करती है, परन्तु ऊष्मा की यह मात्रा धरातल पर सर्वत्र समान नहीं होती है। ऊष्मा की यह मात्रा मुख्य रूप से सूर्य की किरणों के तिरछेपन, दिन की अवधि, स्थल तथा जल के स्वभाव में अन्तर तथा धरातल के विभिन्न रूपों पर आधारित होती है।

ऊष्मा संतुलन (Heat Balance)

सूर्य से ऊष्मा प्राप्त करने के बाद पृथ्वी भी ऊर्जा का विकिरण करना प्रारम्भ कर देती है, ताकि धरातल पर ऊष्मा का लगातार संचयन न हो सके। सूर्य के विपरीत पृथ्वी द्वारा होने वाला विकिरण दीर्घ तरंगों के रूप में होता है। इसी पार्थिव विकिरण (terrestrial radiation) से वायुमण्डल का निचला भाग गर्म होता है। इसे **'प्रभावी विकिरण'** (effective radiation) भी कहते हैं। पृथ्वी द्वारा प्राप्त सौर्यिक ऊर्जा का 51% भाग किसी न किसी रूप में शून्य तथा वायुमण्डल में वापस लौटा देना होगा, ताकि पृथ्वी का औसत वार्षिक तापक्रम सामान्य रहे। 23% भाग का धरातल से दीर्घ तरंगों के रूप में विकिरण हो जाता है, इसका 17% भाग सीधे शून्य में चला जाता है। 6% भाग **प्रभावी विकिरण** के रूप में वायुमण्डल को गर्म करता है। धरातल से 9% ऊष्मा विक्षोभ (turbulence) तथा संवहन (convection) के रूप में खर्च हो जाती है तथा शेष 19% ऊष्मा वाष्पीकरण में खर्च हो जाती है। इस प्रकार धरातल से 51% ऊष्मा वापस विकीर्ण हो जाती है, जिस कारण पृथ्वी की सतह पर **प्रवेशी सौर्यिक विकिरण** द्वारा प्राप्त ऊष्मा तथा **बहिर्गामी पार्थिव विकिरण** द्वारा खर्च की गयी ऊष्मा की मात्राएं समान हो जाती हैं, जिससे धरातल पर ऊष्मा संतुलन बना रहता है।

वायुमण्डल कुल 48% ऊष्मा प्राप्त करता है, 14 प्रतिशत प्रवेशी सौर्यिक विकिरण से, 6 प्रतिशत प्रभावी विकिरण (effective radiation) से, 9% विक्षोभ तथा संवहन से एवं 19% संघनन की गुप्त ऊष्मा (latent heat of condensation) से। वायुमण्डल अपनी इस 48% ऊर्जा को शून्य में विकीर्ण कर देता है। इस तरह वायुमण्डल तथा पृथ्वी द्वारा प्राप्त 65% ऊष्मा का 17% भाग पृथ्वी से तथा 48% भाग वायुमण्डल से शून्य में वापस चला जाता है।

(i) पार्थिव ऊष्मा-संतुलन

(Terrestrial Heat Balance)

प्राप्त ऊष्मा	नष्ट ऊष्मा
51%	23% विकिरण द्वारा
	9% विक्षोभ तथा संवहन द्वारा
	19% वाष्पीकरण द्वारा
	51% योग

(ii) वायुमण्डलीय ऊष्मा-संतुलन

प्राप्त ऊष्मा	नष्ट ऊष्मा
14% प्रवेशी सौर्यिक विकिरण से	
6% प्रभावी विकिरण से	48%
9% विक्षोभ तथा संवहन से	शून्य में विकिरण
19% संघनन की गुप्त ऊष्मा से	
48% योग	

अक्षांशीय ऊष्मा-संतुलन

समस्त भूतल का औसत वार्षिक तापक्रम सदैव समवत रहता है, क्योकि पृथ्वी द्वारा प्राप्त प्रवेशी विकिरण तथा पृथ्वी द्वारा बहिर्गामी विकिरण समान हो जाते हैं। परन्तु पृथ्वी के प्रत्येक अक्षांश पर प्राप्त ऊष्मा तथा नष्ट ऊष्मा में समानता नहीं हो पाती है, तथापि किसी भी अक्षांश का तापक्रम न तो सामान्य से नीचा होता जा रहा है, न अधिक हो रहा है। यह स्थिति ऊष्मा के स्थानान्तरण के कारण सम्भव हो पाती है। 37° उ० तथा द० अक्षांशों के बीच प्रवेशी विकिरण (प्राप्त-ऊष्मा) बहिर्गामी पार्थिव विकिरण

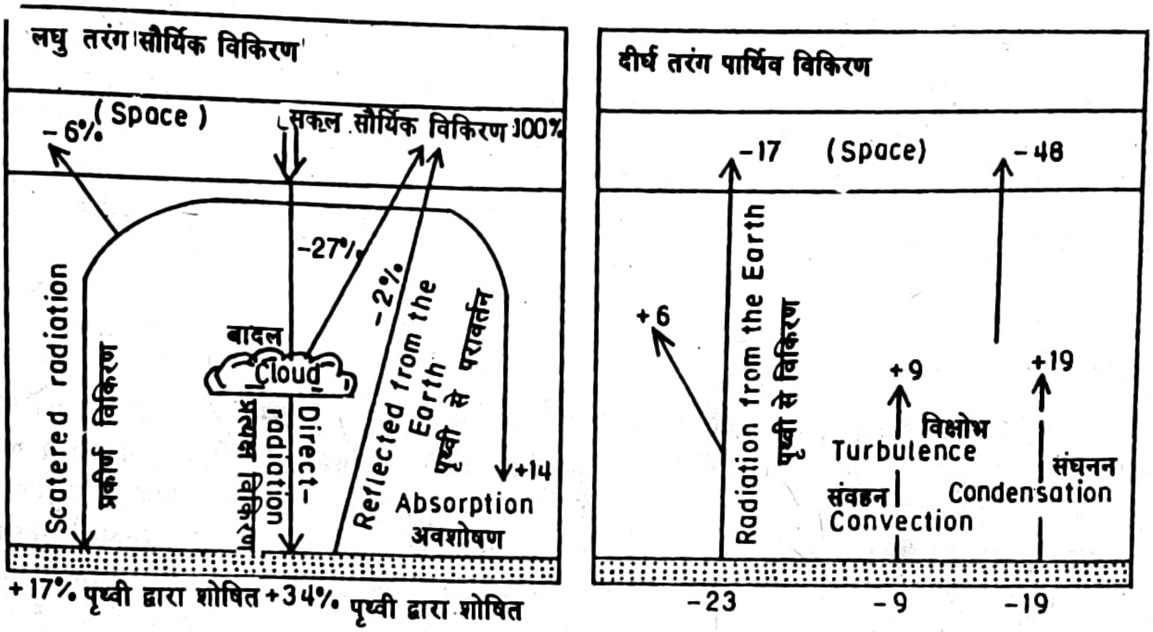

पार्थिव तथा वायुमण्डलीय ऊष्मा का संतुलन ।

(नष्ट ऊष्मा) से अधिक होता है, जिस कारण ऊष्मा अधिक हो जाती है । इसके विपरीत 37° तथा ध्रुवों के बीच नष्ट ऊष्मा की मात्रा प्राप्त ऊष्मा से अधिक हो जाती है, जिस कारण ऊष्मा कम होने लगती है परन्तु अधिक ऊष्मा वाले क्षेत्र से ऊष्मा का स्थानान्तरण कम ऊष्मा वाले भाग की ओर हो जाता है, जिस कारण अक्षांशीय ऊष्मा का संतुलन होता रहता है । ऊष्मा का स्थानान्तरण वायुमण्डलीय प्रवाह (हवाओं) तथा सागरीय धाराओं द्वारा सम्पन्न होता है ।